बचपन से .....

बचपन तक.....!

संघमित्रा आचार्य

कुछ वक्त से बच्चों के साथ समय बिताने का मौका ढूँढ़ रही थी। अपने बचपन के बारे में सोचा तो 'टी.वी.', 'सिनेमा', 'परदे के पीछे की कहानियाँ', 'फोटो खींचना और खिंचवाना' से सम्बन्धित कुछ अनुभव याद आ गए। मैं इन सारी चीज़ों से आज भी जुड़े रहना पसन्द करती हूँ। ऐसे कितने ही अनुभवों को एकजुट करके एक सीख निकालना मुश्किल है, परन्तु जब आप किसी और को वैसे दौर से गुज़रते देखते हैं तो शायद उस उम्र की भावनाओं में दोबारा, यानी 'फ्लैश-बैक' में जाने का मौका मिलता है।

जब 'शाहपुर, उर्दू शाला क्रमांक 10' की कक्षा 3 व 4 के बच्चों के साथ मैंने अपनी रुचि की एक गतिविधि करवाने के बारे में सोचा तो 'फोटोग्राफी' ही पहला शब्द था जो मेरे दिमाग में आया। जब मैंने हेडमास्टर से इस गतिविधि के बारे में चर्चा की तो वे बेहद खुश हुईं, मगर मेरी ज़्यादा उत्सुकता तो यह जानने में थी कि जब बच्चों को इस बात का पता चलेगा तो उनकी प्रतिक्रिया कैसी होगी।

प्रतिक्रियाएँ और भागीदारी

इतनी उत्तेजित होने वाली बात तो शायद नहीं थी क्योंकि आजकल के बच्चे 'टेक्नोलॉजी' में काफी आगे बढ़ चुके हैं, मगर इस विषय पर चर्चा शुरू करने पर इन बच्चों के चेहरे पर उत्साह सच में देखने लायक था।

मैंने बच्चों से पूछा, "आपने फोटो कब और कहाँ देखी है?"

बिलाल, समीर, फातिमा और प्राय – सब एक साथ खड़े हो चिल्ला उठे, "एल्बम में, दीवार पे, जंगल की, बचपन की, टीचर की,...आदि।" मैंने भी कुछ देर तक उन्हें एक-साथ चिल्लाने दिया क्योंकि मैं उस उत्तेजना को रोकना नहीं चाहती थी।

जब 'कैमरे' के बारे में पूछा तो सब-के-सब फिर एक साथ बोल उठे, "स्टूडियो में खिंचवाई थी, माँ-पप्पा के साथ।"

अब की बार मैंने एक नियम बना

दिया, "जो भी बोलना चाहता है वह पहले हाथ खड़ा करेगा और बाकी सब शान्ति से उसकी बात सुनेंगे। फिर हममें से कोई और कुछ बोलना चाहे तो हाथ खड़ा करे (हर बार उन्हें इस नियम को याद दिलाना भी एक नियम बन गया था मेरे लिए)।"

हाँ, तो 'कैमरे' के बारे में पूछते ही बिलाल बोला, "मैंने तो बम्बई मैं खिंचवाई थी, जंगल की खूब सारी फोटू ली थी हम लोगों ने। मेरे पप्पा के पास है एक छोटू कैमरा।" बिलाल को बम्बई के बारे में काफी कुछ पता था और उसके सारे उदाहरणों में 'बम्बई' ज़रूर आ टपकता। बाकी बच्चों से भी कुछ सुने हुए उदहारण ही मिल रहे थे। मैंने उनसे पूछा, "अगर आपको एक कैमरे के साथ अकेला छोड़ दिया जाए, तो आप कैसी तस्वीरें खींचना चाहेंगे?" उनके उत्तर (मेरी नज़र में) तो अजीब ही थे, "खाली ब्लैक-बोर्ड की, स्कूल के पीछे की दीवार की, पढ़ते हुए बच्चों की, बाहर से स्कूल बोर्ड की, ए-बी-सी-डी... की, खाली क्लास की, ...आदि।"

बिलाल बोला, "मैं तो शेर की लूँगा। हम सभी पिकनिक में बाहर जाएँगे गार्डेन में, और मैं ही सभी की फोटू लूँगा। मेरे पप्पा के पास जो कैमरा है, मैं उससे फोटू लूँगा। एक पतला-सा कैमरा जिसे 'इप्पल' कहते हैं।" फिर समीर ने जोड़ा, "और वो टच-स्क्रीन भी होता है।"

फिर जब मैंने बच्चों को बताया कि अब हम सब कैमरे से स्कूल की फोटो खींचेंगे, तो वे बहुत खुश हुए।

अपनी मर्ज़ी से खींचो तस्वीरें

सबसे पहले तो मैंने उन्हें छः-छः की तीन टुकड़ियों में बाँट दिया। फिर उन्होंने खुद ही अपने ग्रुप का नामकरण किया - 'एलिएन्न', 'अजमेर' और 'मक्का'। तीनों टीमों को बारी-बारी से अलग ले जाकर कैमरे की सेटिंग्स के बारे में जानकारी दी। एक-दो बार तो काफी शोर भी हुआ, पर बाद में अनुशासन को मानते हुए सब-के-सब काफी धीरज से सुनने के लिए तैयार हो गए। उन्हें ज़रा भी देर नहीं लगी सारी बातें सीखने में। बारी-बारी से तीनों ग्रुप को स्कूल के अन्दर ही घुमाया गया।

बच्चे बहुत ही उत्साह से भरे हुए थे। कैमरे को हाथ में पाने के बावजूद, उनका आपसी तालमेल देखने लायक था। हर बच्चा दो-तीन फोटो खींच कर कैमरा अपने अन्य साथियों को दे देता और फिर अपनी बारी आने का इन्तज़ार करता। वे एक-दूसरे से कहते, "तू यहाँ की फोटू ले, बहुत अच्छी आएगी", "कैमरे को थोड़ा नीचे से पकड़, और अच्छी फोटू आएगी।"

कुछ दिनों बाद बच्चों को स्कूल के बाहर ले जाकर कैमरे का इस्तेमाल करने का मौका मिला जिसका उन्होंने काफी आनन्द भी उठाया। बच्चों को सबसे ज़्यादा मज़ा आ रहा था भागती हुई बिल्ली को पकड़ने की कोशिश करने और उसकी तस्वीर लेने में। साथ ही इमारतों और मोटर-साइकिल, आते-जाते ऑटोरिक्शा, पास की दुकानों की तस्वीरें लेने में भी काफी मज़ा आ रहा था।

उनकी पसन्द को समझना मेरे लिए थोड़ा मुश्किल हो रहा था, इसलिए उस वक्त उन बातों को न समझने की कोशिश करने में ही मेरी समझदारी थी। उनका व्यवहार ऐसा शायद इसलिए भी था क्योंकि निर्देश देते हुए मैंने ही कहा था कि वे कैसी भी तस्वीरें खींचते रहें – टेढ़ी-मेढ़ी, छोटी-बड़ी, ऊपर-नीचे...।

तस्वीरों की प्रदर्शनी

तस्वीरें खींचने की कवायद के बाद सभी बच्चों ने अपनी-अपनी टीम में बैठकर अपनी खींची हुई तस्वीरों को एक सफेद कागज़ पर चिपकाया और

बच्चों द्वारा खींची गईं फोटो

बची खाली जगहों को रंगों से भर दिया। लगभग एक-डेढ़ घण्टे तक उन तस्वीरों को देख वे आपसी चर्चा में खोए रहे। और बीच-बीच में आपस में लड़ते भी, "यह मैंने खींची है। मुझे दे, मैं चिपकाऊँगा।" लेकिन वह झगड़ा कुछ ही पल के लिए था। वे सब आपसी बातचीत में ऐसे खो गए कि आसपास के टीचर, मुझे और सभी को भूल गए थे।

अगली गतिविधि थी एक-दूसरे को तस्वीरों के माध्यम से अपनी कहानी सुनाना। सभी बच्चों ने अपने एल्बम में टूटे-फूटे अक्षरों में अपना नाम लिखा और रंग भरा।

जब सब तैयारियाँ हो गईं तो छोटी-बड़ी कक्षाओं के सभी बच्चों और शिक्षकों को बुला लाए जैसे कि सच में 'एग्ज़िबिशन' ही हो। अब तो सच, उस शोर को सम्भालना मुश्किल ही था। कितना मज़ा आ रहा था उन्हें अपनी कहानियों (तस्वीरों) को दूसरों को दिखाने में।

कुछ यादें, कुछ सवाल

ये तो सच है कि ये बच्चे कैमरे (डिजिटल या मोबाइल) से पहले से ही परिचित हैं

पर स्कूल परिसर में ऐसी चीज़ों का इस्तेमाल उन्होंने शायद ही किया होगा। इस गतिविधि की वजह से बच्चे मुझसे और नज़दीकी से जुड़ गए। जब भी स्कूल जाती हूँ, फिर से चर्चा शुरू हो जाती है। सब-के-सब आकर घेर लेंगे और फिर से उन तस्वीरों के बारे में बोलना शुरू कर देंगे। मैं उनसे बातें करते ही अपने बचपन में खो जाती हूँ। अपने सबसे अच्छे शिक्षक के बारे में सोचने लगती हूँ।

इस अनुभव के बाद कुछ सवाल मेरे दिमाग में घुमड़ने लगे – क्या सच में बच्चे अपनी समझदारी से महँगी चीज़ें इस्तेमाल करना नहीं जानते, क्या हमेशा ज़रूरी होता है उन्हें डाँट-मारकर सिखाया जाए कि कीमती वस्तुओं का इस्तमाल कैसे करें? वे जिन चीज़ों को अपनेपन और अधिकार से अपनाते हैं, क्या उन चीज़ों का वे सावधानी से उपयोग नहीं करेंगे? उन्हें ऐसी साधारण बातें सिखाने के लिए भी नियम-कानून या पिटाई की ज़रूरत होती है, या हम बड़ों की अधीरता का यह एक प्रमाण है? मैं इन बातों में उलझी हूँ क्योंकि कभी शायद मुझे भी बड़ों ने महँगी चीज़ों का इस्तेमाल करने से रोका था!! उस समय मेरे पास रोने के अलावा और कोई उपाय नहीं था और मेरी जिज्ञासाओं का उनके पास कोई समाधान नहीं था।

मुझे अच्छा लगा कि इस अनुभव के दौरान मेरे बचपन से किसी और का बचपन जैसे बातों-बातों में जुड़ गया, एक दोस्ताना रिश्ते की ओर कदम बढ़ाते हुए।

संघमित्रा आचार्यः कैवल्य एजुकेशन फाउंडेशन, अहमदाबाद के गाँधी फैलोशिप प्रोग्राम के तहत अहमदाबाद के म्युनिसिपल स्कूलों के साथ 'प्रिंसीपल लीडरशिप डेवलपमेंट प्रोग्राम' पर काम किया है। हाल ही में 'फोटोग्राफी विद चिल्ड्रन इन स्कूल' प्रोजेक्ट का संचालन किया है।

सभी फोटोग्राफः संघमित्रा आचार्य।

संदर्भ के शुरुआती अंकों में प्रकाशित सामग्री पढ़ने के लिए विज़िट कीजिए

www.sandarbh.eklavya.in

प्रकाशित सामग्री पर अपने विचार भेजने के लिए हमें संदर्भ के पते पर खत भेजिए या sandarbh@eklavya.in पर ई-मेल भेजिए।